**ओ३म्**

**‘संसार की समस्याओं का कारण मत-मतान्तरों की अविद्याजन्य मान्यतायें’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

आज का आधुनिक संसार अनेक प्रकार की समस्याओं से पीढि़त व ग्रसित है। इनके हल के लिए संसार के विभिन्न देशों में सरकारें, विभाग, कार्यालय व अन्य सहयोगी संस्थाओं सहित विश्व स्तरीय संगठन संयुक्त राष्ट्र है परन्तु फिर भी समस्यायें हल होने के स्थान पर दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं। विश्व में कई स्थानों पर युद्ध चल रहे हैं व अनेकों जगह युद्ध जैसे हालात हैं। संसार के मनुष्य समस्याओं से घिरे हुए हैं। यदि इन समस्याओं का मूल कारण देखा जाये तो प्रमुख कारण संसार के अविद्याजन्य मत-मतान्तर निर्धारित होते हैं। यदि यह मत-मतान्तर न होते तो क्या देश व विश्व में आज वह समस्यायें होती जो कि आज हैं? कदापि नहीं। मनुष्यों की कुछ समस्यायें हो सकती थी जिन्हें प्रेम, सद्भाव से वा सभी देश धर्म भावना से मिल कर हल कर लेते। यदि कोई सहयोग न करता जैसा कि रामायण काल व महाभारत काल में रावण व कौरवों ने किया था, तो सामूहिक रूप से युद्ध द्वारा उस देश को दण्डित करके उसे सत्य मार्ग को अपनाने पर विवश किया जा सकता था।

 मत-मतान्तर विश्व के देशों के लोगों को आपस में बांट कर रखते हैं जिनसे व जिसमें सत्य दब जाता है। सत्य के तिरोहित होने से मनुष्यों के सुख भी तिरोहित हो जाते हैं क्योंकि सुख, शान्ति व कल्याण का आधार धर्म, सत्य व परहित आदि कार्य ही हुआ करते हैं। मत-मतान्तरों में जैसा आजकल देखने को मिल रहा है, उन मतों के प्रवर्तक महोदयों ने जो बातें मध्यकाल अर्थात् अविद्या के काल में कह दी अथवा उनके अनुयायियों ने समझने में भूल कर अनुकूल व प्रतिकूल लिख दी, उसी को उस समुदाय का धर्म व मत मान लिया गया व आज भी माना जा रहा है। अपने मत-धर्म प्रवत्र्तक के उस विचार, मत या मान्यता पर उनके अनुयायियों को विचार कर सुधार करने की स्वतन्त्रता वा अधिकार नहीं होता जिससे उन-उन मतों के ज्ञान व विज्ञान से रहित कुछ या बहुत से विचार व मान्यतायें सृष्टि के प्रलय काल तक के लिए सत्य न होकर भी अधिक महत्वूपर्ण बन गयीं हैं। मध्य-अज्ञान-कालीन मतों व घर्मों के बाहर भी बहुत कुछ ज्ञान है, उदाहरण के लिए वैदिक ज्ञान, सन्ध्या, यज्ञ-अग्निहोत्र, यौगिक जीवन आदि, जिसे जानने व समझने का प्रयास ही नहीं किया जाता। सभी मत व उनके अनुयायी इस विचार से सन्तुष्ट हैं कि उनके मत में कहीं कोई अपूर्णता नहीं है और उन्होंने किसी अन्य से कोई श्रेष्ठ व उपयोगी बात भी सीखनी नहीं है। कोई भी मत अपने मत के वैज्ञानिक व अन्य विषयों के विद्वानों को उन विचारों के विपरीत बोलने व अपने विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता नहीं देता। इससे वृहत मनुष्य समाज ज्ञान व विज्ञान द्वारा भविष्य में उन मतों व उसके अनुयायियों के सुधार व सुधारों से होने वाले लाभ से वंचित हो रहा है।

हम भारत के सन्दर्भ में ही विचार करते हैं। यदि हमारे देश में अनेक पौराणिक व इतर मत न होते तो हमारे लोग अज्ञान, अन्धविश्वासों, दलितों व मातृ-शक्ति स्त्रियों के प्रति अस्पर्शयता, शोषण और अन्याय आदि सामाजिक बुराईयों में न फंसते और तब वह अवश्य ही ज्ञान व विज्ञान की बातें करते और जिन विषयों का वैज्ञानिक व ज्ञानियों ने अट्ठारहवीं शती व उसके बाद अन्वेषण व अनुसंधान किया है, वह हमारे देश के लोग भारतवासी ही मध्यकाल व उससे पूर्व भी कर सकते थे। परन्तु पौराणिक मत व उसके कर्मकाण्डों के कारण यह न हो सका। क्या हुआ? कि महाभारत काल के बाद व मध्यकाल में लोग धार्मिक अन्धविश्वासों से ग्रसित हो गये और जो बुद्धि की उन्नति व विकास के कार्य उन्हें करने थे, वह सब धर्म विषयक अन्धविश्वासों की बलि चढ़ गये। आज भी वही धारा बह रही है जिसका कोई विरोध नहीं कर सकता। इन विपरीत परिस्थितियों में महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825-1883) ने धार्मिक व सामाजिक अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, ढ़ोग, कुशिक्षा व दैनिक मिथ्या कर्मकाण्ड सहित सामाजिक असामनता का ज्ञान, तर्क व युक्ति सहित और वेद तथा वैदिक प्रमाणों से जो प्रकाश, प्रचार व खण्डन-मण्डन आदि किया, उसका बहुत सीमित प्रभाव हुआ जिस कारण आज भी देश में बड़ी संख्या में मत-मतान्तर बने हुए हैं। इन मत-मतानतरों से देश में ज्ञान व विज्ञान की उन्नति व सामाजिक समानता तथा सबका सन्तुलित विकास नहीं हो पा रहा है और इस स्थिति के रहते हुए कभी सम्भव होता भी नहीं दीखता है।

 सभी मत-मतान्तरों में अज्ञान व अज्ञानमूलक मान्यतायें विद्यमान हैं जिससे समाज का अहित होता है। कुछ मत-मतान्तरों में दूसरे मत के लोगों का येन केन प्रकारेण धर्मान्तरण करने की हानिकारक प्रवृत्ति भी विद्यमान है। लोगों को असत्य को छोड़कर सत्य को तो अवश्य ही स्वीकार करना चाहिये परन्तु एक असत्य मत को छोड़कर दूसरे असत्य मत में ही चले जाना कोई बुद्धिमत्ता व विवेकपूर्ण कार्य नहीं है। विगत अनेक शताब्दियों से यही होता आ रहा है और आज भी इस पर अंकुश नहीं लगा है। अनेक मत-मतान्तरों में यह भावना व प्रवृत्ति पहले की तुलना में कहीं अधिक मात्रा में विद्यमान है और यह कार्य देश के अनेक भागों में गुप-युप रीति से होता भी रहता है जिसमें अनेक वोट बैंक और पक्षपातयुक्त विचारधारा के कारण राजनैतिक दलों की भी मौन स्वीकृति होती हैं। इन कारणों से समाज में एकरसता व एकरूपता उत्पन्न नहीं हो पाती। यदि ऐसा न होता तो सभी मनुष्य एक साथ रहकर एक दूसरे के सुख-दुख बांटते और सबकी समस्यायें परस्पर के सहयोग व सद्भावना से ही हल हो जाती। इसका एक ही समाधान है कि सभी मत अपने अपने सिद्धान्तों व मान्यताओं पर स्वयं ही सुधार की दृष्टि को सामने रखकर विचार करें और जहां मनुष्य के हित में जो सुधार आवश्यक हो, वहां पुराना नियम संशोधित कर नया नियम बनाया जाये। इसमें सहायता के लिए वेद की शरण ली जा सकती है। वेद किसी मत-सम्प्रदाय-पंथ व समुदाय के लोगों के ग्रन्थ नहीं है। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से वेदों का ज्ञान मिलने के कारण यह मनुष्यमात्र की साझी सम्पत्ति है जिसे सम्प्रदायवादी ने अपने अज्ञान व स्वार्थ के कारण केवल हिन्दूओं व आर्यों की सम्पत्ति मान लिया है। यह तथ्य है कि वेदों व वैदिक साहित्य पर भारत के आर्यों व हिन्दुओं सहित भारत के सभी मत-पन्थों व विश्व के भी सभी मनुष्यों का समान अधिकार है।

 हमने जो विचार प्रस्तुत किये हैं कुछ इसी प्रकार के विचार महर्षि दयानन्द व उनके गुरु स्वामी विरजानन्द जी के थे। उन्हें सभी मानवीय समस्याओं का समाधान भी सुलभ था और वह यही था कि सभी लोग वेद को अपना प्रमुख धर्मग्रन्थ स्वीकार करें जिससे समाज में एकमत होने से परस्पर प्रेम, सौर्हाद्र, सुख, शान्ति, समानता, सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग, अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि की प्रवृति विकसित हो। महर्षि दयानन्द ने इसी कारण से अपना पूरा जीवन सत्य धर्म के प्रचार अर्थात् वेद प्रचार को समर्पित किया और देश व विश्व के सभी मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिए सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय सहित वेद भाष्य आदि अनेकानेक ग्रन्थों की रचना की। महर्षि दयानन्द की ज्ञान-विज्ञान युक्त मान्यताओं व वैदिक सिद्धान्तों का सीमित प्रभाव ही हुआ। देश में अनेक लोगों ने वेदमार्ग पर चलना आरम्भ किया और अब भी चल रहे हैं। कुछ लोगों के अपने-अपने मतों से आर्थिक स्वार्थ जुड़े थे, उन्होंने महर्षि की बातों को सुना और मौन रहे, प्रतिवाद की सामथ्र्य उनमें नहीं थी। यदि किसी ने प्रतिवाद करने का प्रयास किया तो वह पराजित होकर दूर हो गया। आर्थिक स्वार्थ, लोभ व प्रतिष्ठा आदि से ऊपर उठने की शक्ति व मनोबल उनमें नहीं था। उन्होंने महर्षि दयानन्द की विचारधारा की स्वीकृति मौन रहकर व दूसरों से चर्चा कर दी। इन्हीं लोगों ने अपने अल्पज्ञानी व अज्ञानी शिष्यों को गुमराह कर सत्य को स्वीकार नहीं करने दिया जिससे संसार में नाना प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं। जिस प्रकार पिता के मार्गदर्शन की अवहेलना कर पुत्र व सन्तानें किंवा परिवार उन्नति नहीं कर सकता, इसी प्रकार से ईश्वर की वेदरूपी आज्ञा की अवहेलना व तिरस्कार कर देश व विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। अतः विश्व को शान्ति का धाम बनाने व सभी समस्याओं पर विजय पाने के लिए सब मनुष्यों को सत्य की शरण में जाना ही होगा। इसी से हमारा अभ्युदय व निःश्रेयस सिद्ध होगा। अन्य कोई मार्ग है ही नहीं। यदि हम इसकी अवहेलना व उपेक्षा करेंगे तो हमारा परजन्म वा भावी जन्म उन्नत होने के स्थान पर अवनति को प्राप्त होगा। सत्य व उसका विपरीत मार्ग चुनने का अधिकार ईश्वर ने मनुष्यों को प्रदान किया है। विवेकशील मनुष्य सत्य का अनुसरण करते हैं और अज्ञानी अज्ञान के कारण मार्ग चुनने में गलती करते हैं। ज्ञानी मनुष्य की परीक्षा वेद के ज्ञान को आत्मसात कर उसके अनुसार कर्म करने से होती है। इतर अज्ञानी तो अहंकार का ही प्रतीक हैं। महर्षि दयानन्द जी सहित महापुरुषों श्री राम, श्री कृष्ण, महर्षि बाल्मिकी, वेदव्यास जी, महर्षि अरविन्द, स्वामी श्रद्धान्न्द जी व पं. गुरूदत्त विद्यार्थी आदि के जीवन चरित पढ़कर आदर्श व परमार्थ प्रदान कराने वाली जीवन पद्धति को जाना व समझा जा सकता है। इससे पता चल सकता है कि इन महापुरुषों का मार्ग सही था या नहीं? यदि सभी मतों के विद्वान अपने मतों की पुस्तकों सहित वेद व वैदिक साहित्य का भी श्रद्धापूर्वक अध्ययन करें तो वह सत्य को अवश्य प्राप्त हो सकते हैं जिससे विश्व का कल्याण हो सकता है। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**